विभिन्न संदर्भों में नारी अस्मिता का हिन्दी महिला उपन्यासों में वर्णन

Savita^{1*} Prof. Duwedi²

¹ Research Scholar, OPJS University, Churu, Rajasthan

² Professor

सार – नारी अस्मिता की परिभाषा किसी निश्चित वैचारिक फ्रेमवर्क के अन्तर्गत नहीं की जा सकती। ऐतिहासिक एवं सामाजिक कारणों की खोज के बावजूद समाज में नवीन विकास और परिवर्तन अनेक अन्तर्विरोधों से युक्त हैं। परंपरा की विरासत और आधुनिकता का स्वीकार जिस निर्णायक क्षितिज की अपेक्षा रखता है, वह बहुत ही धुंधला छें नारी के सार्वभौमिक अस्तित्व की अनिवार्यता के सम्बंध में इंदिरा गांधी ने कहा है कि – “नारी-स्वतंत्रता भारत के लिए विलासिता नहीं है, अपितु राष्ट्र की भौतिक, वैचारिक और आत्मिक संतुष्टि के लिए अनिवार्य बन गई है।” डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने भारतीय संविधान में नारी मुक्ति के लिए अनुच्छेद 15(1) द्वारा लिंग के आधार पर किए जाने वाले भेद को समाप्त किया और अनुच्छेद 14 द्वारा नारी को पुरुष के समान बराबरी का दर्जा दिलाया एवं समान कार्य के लिए समान वेतन दिलाने की व्यवस्था की, किन्तु सीमोन द बाउवार का कहना है कि- “आज की स्त्री पारंपरिक नारी की भूमिका में स्वयं को पंगु नहीं बना देना चाहती, किंतु इससे बाहर आते ही उसे अपने नारीत्व का उल्लंघन करना पड़ता है, पुरुष यदि अपनी सेक्सुअलिटी के कारण संपूर्ण व्यक्ति बने, तब स्त्री भी उसके बराबर अपनी पहचान नारीत्व को बनाए रखकर ही हासिल कर सकती है।”

-----X-----

प्रस्तावना

नारी अस्मिता

अस्मिता शब्द प्रमुखतः 20वीं शताब्दी से प्रचलन में आया है। एक विचारधारा के रूप में, एक अवधारणा के रूप में इसका प्रयोग आधुनिक युग की देन है। अभिधात्मक दृष्टि से अस्मिता का सामान्य अर्थ है- ‘अपने आप की पहचान’, अपने ‘स्व’ की पहचान, ‘अहंकार’, ‘स्वाभिमान’, ‘गर्व’ अथवा ‘अपनी सत्ता-बोध’ आदि। लेकिन जब इसका प्रयोग अवधारणा के रूप में किया जाता है तब इसके अनेक निहितार्थ सामने आते हैं। मानक हिन्दीकोश में अस्मिता (स्त्री सं० अस्मि+तल्+टाप) के अर्थ- ‘मन’ का यह भाव या मनोवृत्ति कि मेरी एक पृथक् और विशिष्ट सत्ता है अर्थात् ‘मैं हूँ’ ‘अहंभाव’, (Egoism), अभिमान, अहंकार और घमंड हैं।

अस्मिता ‘वैयक्तिकता’ (Individuality) तथा ‘पहचान’ (Identity) से सम्बंधित है। दरअसल यह एक आत्मपहचान है, स्वत्व है जिसके माध्यम से व्यक्ति अपनी इतिहास, परंपरा सामाजिक एवं सांस्कृतिक समझ के तहत अपने को पहचान लेता है, हर किसी संदर्भ का मूल्यांकन करता है।

इन्साइक्लोपिडिया ऑफ सोशियोलोजी के अनुसार- “व्यक्ति विशेष अपनी पहचान एक नहीं दो धरातलों पर बनाता है। एक वह जो उसका निजी व्यक्तिगत लघु समाज है, जिसका वह अभिन्न अंग है। दूसरा वह वृहत् समाज जिसमें वह प्रवेश पाना चाहता है, ताकि वह अपने आपको बाह्य जगत से जोड़ सके एवं किसी प्रभुत्व इकाई का भाग बन सके। अस्मिता सिद्धान्त विश्वास करती है कि विकल्प की संभाव्यता मानवीय जीवन या अस्तित्व में अंतर्भूत है। अस्मिता सिद्धान्त इस सामाजिक सत्य की पहचान करती है कि सामाजिक संरचना एवं सामाजिक अन्तर्क्रिया जैसे अंतर्भूत कारक हैं, जो मानवीय आचरण निर्धारित करते हैं। अस्मिता सिद्धान्त एक ही परिस्थिति में विभिन्न लोगों द्वारा किए गये विभिन्न आचरणों में अपनी व्याख्या खोजती है।

20वीं सदी में भूमण्डलीकरण सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक स्थितियों के कारण भारतीय समाज में नारी अस्मिता की अवधारणा को बल मिला। आरम्भिक दौर में समाज-सुधार आन्दोलनों, राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम और शिक्षा के विकास की मांग के कारण नारी की जड़-प्रायः स्थितियों ने

करवट बदलनी शुरू की। बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध एक ऐसे दौर का संक्रमण काल बन गया जो उत्तरोत्तर पुरानी मान्यताओं, स्थापनाओं और परंपराओं को परे धकेल कर एक पूरी शक्ति के जागने, समझने का समय है। प्रचार-प्रसार माध्यमों ने एवं पत्रकारिता के व्यापक प्रसार ने भी नारी-मुक्ति संगठनों और आन्दोलनों को हवा दी। स्वयं स्त्रियों ने भी ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में अपनी पहचान का आकलन किया है, परिणामतः विषम चुनौतियों का सामना कर जीवन के हर क्षेत्र में उन्होंने उदाहरण भी प्रस्तुत किए हैं। नारी अस्मिता की परिभाषा किसी निश्चित वैचारिक फ्रेमवर्क के अन्तर्गत नहीं की जा सकती। ऐतिहासिक एवं सामाजिक कारणों की खोज के बावजूद समाज में नवीन विकास और परिवर्तन अनेक अन्तर्विरोधों से युक्त हैं। परंपरा की विरासत और आधुनिकता का स्वीकार जिस निर्णायक क्षितिज की अपेक्षा रखता है, वह बहुत ही धुंधला है।

नारी के सार्वभौमिक अस्तित्व की अनिवार्यता के सम्बंध में इंदिरा गांधी ने कहा है कि – “नारी-स्वतंत्रता भारत के लिए विलासिता नहीं है, अपितु राष्ट्र की भौतिक, वैचारिक और आत्मिक संतुष्टि के लिए अनिवार्य बन गई है।” डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने भारतीय संविधान में नारी मुक्ति के लिए अनुच्छेद 15(1) द्वारा लिंग के आधार पर किए जाने वाले भेद को समाप्त किया और अनुच्छेद 14 द्वारा नारी को पुरुष के समान बराबरी का दर्जा दिलाया एवं समान कार्य के लिए समान वेतन दिलाने की व्यवस्था की, किन्तु सीमोन द बाउवार का कहना है कि- “आज की स्त्री पारंपरिक नारी की भूमिका में स्वयं को पंगु नहीं बना देना चाहती, किंतु इससे बाहर आते ही उसे अपने नारीत्व का उल्लंघन करना पड़ता है, पुरुष यदि अपनी सेक्सुअलिटी के कारण संपूर्ण व्यक्ति बने, तब स्त्री भी उसके बराबर अपनी पहचान नारीत्व को बनाए रखकर ही हासिल कर सकती है।”

हिन्दी उपन्यास में नारी

आज के उपन्यास में महिला की उपन्यासकारों के उपन्यास समय की समस्याओं और चुनौतियों से भरा है। उपन्यास लेखन की और महिला एवं पुरुष दोनों ही अग्रसर हुए हैं जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मात्रात्मक ही नहीं अपितु गुणात्मक परिवर्तन भी आया है। आधुनिक जीवन में मूल्य की सर्वाधिक चर्चा रही है। साहित्य की लोकप्रिय विधा उपन्यास के माध्यम से वर्तमान में बदलते मूल्य अपना अस्तित्व खो रहे हैं। आधुनिक युग में ‘उपन्यास के महत्व को प्रतिपादित करते हुए एक विहान लिखते हैं। “मध्य युग में जो स्थान महाकाव्य का था, उससे भारतेन्दु युग में जो स्थान नाटक का था वही वरन् युग के अनुकूल उससे भी कहीं अधिक महत्वपूर्ण स्थान आज उपन्यास का है।”

हिन्दी महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में मूल्य चेतना से संबद्ध है महिला लेखिकाओं ने उपन्यास लेखन में अपना विशेष योगदान दिया है। इनका चिंतन एवं इनकी दृष्टि समाज की सच्चाई व सत्य के अधिक निकट है, हिन्दी उपन्यास में महिलाओं का विशेष योगदान रहा है, दूसरा इनके साहित्य की प्रायः उपेक्षा होती रही है। यदि उपन्यास साहित्य में महिलाओं को उजागर किया भी गया तो इनके दृष्टिकोण का व्यापक चित्रफलक उभरकर सामने नहीं आ सका, नारी होने के नाते इनकी प्रेम समस्या पुरुष की प्रेम समस्या से भिन्न है। नारी अपने स्वतंत्र अस्तित्व को न केवल पहचानने लगी है अपितु उसे स्थापित भी करने लगी है। “नारी के जीवन के प्रेम की अनुभूति उसके केन्द्र में है और इसकी अपनी सीमाएँ भी हैं एक नारी के जीवन में व्याप्त संत्रास, घुटन, त्रासदी, प्रेममय भाव और व्यापार को नारी मन की अपेक्षा कौन अधिक सच्चाई से प्रकट कर सकता है।”

आज की महिला उपन्यासकारों में नारी की नारी के प्रति संपूर्ण दृष्टिकोणों को बड़े ही खुले एवं बेझिझक ढंग से समाज के सापेक्ष अपने जीवन की उधेड़बुन को दर्शाया गया है। महिला उपन्यासकारों ने मूल्य विघटन, समकालीन जीवन की जटिल संवेदना, व्यंग्य दृष्टि के जरिये सामाजिक स्थितियों की फूहड़ता को खोलकर रखा गया है इस प्रकार समकालीन उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ को पहचानने की क्षमता मिलती है।

हिन्दी उपन्यास में नारी ने अपने कथा साहित्य में मुख्य सरोकार समकालीन जीवन स्थितियों में मनुष्य के भीतरी संसार का उद्घाटन किया है लेकिन यह भीतरी कशमकश भी बदलते जीवन परिवेश का आत्मीय ब्यौरों और कलात्मक नजर के साथ अंकन भी करती चली है। “महिला उपन्यासकारों ने अपने उत्साह में ये भुला देते हैं कि कथा साहित्य के व्यापक कैनवास पर अलग-अलग रंगा के रूप में भी उनका कुछ महत्त्व हो सकता है।” इन्होंने जीवन स्थितियों से रहित संवेदना का या संवेदनाविहीन जीवन स्थितियों के अर्थ को पूर्ण रूप से उजागर किया है। महिला उपन्यासकारों द्वारा रचित रचनाओं में संसार के सभी पक्षों के चित्रों को उजागर किया गया है और अपनी सरलता के कारण जन जीवन की जीवित शास्त्र बन गई है। महिला लेखिकाओं ने नारी मन की विभिन्न भावनाओं का चित्रण किया है साथ ही आज की पढ़ी-लिखी युवतियों के विचार ईश्वर के संबंध में परम्परा से हटकर है।

महिला उपन्यास साहित्य मूलतः हमारे समाज के मध्यमवर्ग पर आधारित है। मध्यमवर्ग की नींव एक ओर तो उसकी आर्थिक स्थिति पर है दूसरी ओर उसके परिवार की केन्द्र बिन्दु स्त्री पर। हिन्दी उपन्यास में सर्वथा एक नयी चेतना आई-स्त्री को देखने, समझने, मूल्यांकन की नई दृष्टि और जीवन के नवीन

परिवर्तित प्रतिमानों को लेकर। जीवनगत बाह्य व्यापारों की विवेचना का सहारा लेकर उपन्यासकारों ने नारी चरित्र को अपने उपन्यासों में संपूर्णता से उभारा है। उसके प्रति किए गए सामाजिक अन्यायों का खुलकर पर्दाफाश किया है और उन्हीं के परिप्रेक्ष्य में नारी के उत्थान-पतन को आंका है। “नारी के अंतर्मन के विश्लेषण का कार्य आठवे दशक के उपन्यासकारों में महिला उपन्यासकारों ने बड़ी सजीवता से किया है इन्होंने मानव जीवन के अंकन में मनोविज्ञान के अंतश्चेतनावादी दृष्टिकोण का सहारा लिया है।”

शोध की आवश्यकता

शिक्षा एवं स्वतन्त्रता के अभाव के कारण स्वतन्त्रता से पूर्व हमारे देश में नारी की स्थिति बड़ी दयनीय रही है। इसलिए राष्ट्रीय आन्दोलन में महिलाओं की भूमिका नगण्य रही है। स्वतन्त्रता प्राप्त के बाद देश की स्थिति में जो परिवर्तन हुआ है। उसका प्रभाव नारी वर्ग पर भी पडा है। शिक्षा के प्रचार-प्रसार के कारण नारी जीवन के सभी क्षेत्रों में सक्रिय दिखाई देने लगी। यद्यपि प्रारम्भ में इनकी मात्रा कम ही रही है। सन् 1960 के बाद महिलाओं ने अपनी चेतना शक्ति एवं योग्यता के कारण यह प्रमाणित करना प्रारम्भ कर दिया कि स्त्रियां पुरुषों से किसी भी रूप में कम नहीं हैं। नारी की इसी चेतना, शक्ति एवं योग्यता को साठोतरी काल के कथाकारों ने अपना विषय बनाया व नारी चेतना से संबंधित अनेक रचनाओं की रचना की जिनमें महिलाओं कथाकारों का भी योगदान रहा।

उद्देश्य

1. हिंदी साहित्य में नारी का स्थान निश्चित कर उन्हें अवगत करना
2. भारतीय संस्कृति में नारी के वर्तमान परिपेक्ष्य में नारी के अस्तित्व को सिद्ध करना

उपसंहार

नारी अस्मिता की परिभाषा किसी निश्चित वैचारिक फ्रेमवर्क के अन्तर्गत नहीं की जा सकती। ऐतिहासिक एवं सामाजिक कारणों की खोज के बावजूद समाज में नवीन विकास और परिवर्तन अनेक अन्तर्विरोधों से युक्त हैं। परंपरा की विरासत और आधुनिकता का स्वीकार जिस निर्णायक क्षितिज की अपेक्षा रखता है, वह बहुत ही धुंधला है। नारी अस्मिता अपने स्थूल रूप में नारी की वैयक्तिकता, व्यक्ति या मनुष्य के रूप में उसकी गरिमा, प्रतिष्ठा तथा पहचान है, जिसमें अपने जीवन पर खुद उसकी सत्ता होती है। नारी

अस्मिता नारी के व्यक्तित्व की विशिष्ट एवं विलक्षण पहचान है जो उसके समाज की विलक्षण ऐतिहासिकता एवं वास्तविक अथवा मिथकीय अतीत से जोड़ती है। यह निजत्व का भाव है जिसमें नारी की इच्छा-अनिच्छा महत्वपूर्ण होती है। यह नारी में अहंभाव उत्पन्न करते हुए स्वयं को श्रेष्ठ सिद्ध करने की ख्वाहिश भी व्यक्त करती है।

नारी शिक्षा एवं संवैधानिक अधिकारों से नारी की स्थिति में आशातीत परिवर्तन आया है, किन्तु सामाजिक संदर्भों में नारी आज भी परंपराओं, रूढ़ियों, संस्कारों से पूर्णतः स्वतंत्र नहीं हुई है। नारी के स्वतंत्रत व्यक्तित्व एवं स्वाभिमान ने अनेक अन्तर्द्वंद्व कुण्ठा, एवं संघर्ष को जन्म दिया है। उसका स्वाभिमान, स्वतंत्रता ने नारी आन्दोलनों को सशक्त वाणी प्रदान की है। पश्चिमी नारी आन्दोलन ने भारतीय समाज में नारी स्वतंत्रता के नए रूपों को जन्म दिया है। नारी अस्मिता का दृष्टिकोण पुरुष विरोधी नहीं है, बल्कि पुरुष वर्चस्व का विरोधी है, समाज में नारी की पहचान और क्षमता मनवाने का एक सार्थक एवं कारगर प्रयास है। 20वीं सदी में भूमण्डलीकरण, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक स्थितियों के कारण भारतीय समाज में नारी अस्मिता को बल मिला।

आधुनिक सुशिक्षित नारी हर क्षेत्र में राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उस व्यवस्था को चुनौती दे रही है जो उसके हितों को चोट पहुँचाते हैं। नारी की मुक्ति तभी हो सकती है जब उसे आर्थिक-आत्मनिर्भरता के साथ सामाजिक स्वतंत्रता भी मिले। हमारे समाज में लड़की को पढ हो रहा है।

महिला-उपन्यासकारों के उपन्यासों में नारी की समाज में तीन स्थितियाँ अपने पहली स्थिति में वह सदियों से चली आ रही शोषण और अत्याचार की स्थितियों की शिकार है। दूसरी स्थिति में वह नयी परिस्थितियों से पैदा हुई समस्याओं से जूझ रही है और तीसरी स्थिति में आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी होने, परंपरागत नारी संहिता की जकड़न को चुनौती देने और राजनीतिक दृष्टि से सबलीकरण की दिशा में अगसर होने के लिए संघर्षरत है। सदी के अन्तिम दो दशकों में प्रकाशित उपन्यासों में हमारा साक्षात्कार से भी स्त्री पत्रों से होता है जो अपने सामने उपस्थित चुनौतियों को दृढ़ मार्यादाओं के गढ़ को तोड़ती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. किरण गोवरनासिरा शर्मा का शाल्मली: स्त्री अस्मिता की पताकाशए "MALTI" INTERNATIONAL ONLINE HINDI RESEARCH JOURNAL, वर्ष: 4, अंक: 2, जुलाई-दिसम्बर, 2015
2. रेखा कस्त्वार, स्त्री चिन्तन की चुनौतियां, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2006 1994, पृ. 64
3. सौ निकाए शरद सिंह के साहित्य में नैतिकता का समाज पर प्रभाव, International Journal of Multidisciplinary Education and Research ISSN: 2455-4588; Impact Factor: RJIF 5.12 Received: 29-11-2018; Accepted: 31-12-2018
4. पत्की ए. सी. स्त्री विमर्श और हिन्दी उपन्यास International Recognized Multidisciplinary Research Journal Volume : V, Issue : XII, January - 2016
5. Dr. Mrs. Vrinda Sengupta, नारी चेतना, मानवाधिकार: नई दशा-दिशा एवं अस्तित्व की पहचानए International Journal of Advances in Social Sciences Int. J. Ad. Social Sciences 1(2): Oct. - Dec. 2013; Page 58-60
6. डॉ. उषा यादव, हिन्दी की महिला उपन्यासकारों की मानवीय संवेदना, पृ.सं.-162
7. आशारानी व्होरा, नारी शोषण: आईने और आयाम, पृ.सं.-233
8. प्रभा खेतान, स्त्री उपेक्षिता (द सैकेण्ड सैक्स) का हिन्दी रूपांतरण सार्क विहार, 1990, पृ.सं.-60
9. रूपा सिंह, स्त्री अस्मिता और कृष्णा सोबती, पृ.सं. 18
10. डॉ. दर्शन पाण्डेय, नारी अस्मिता की परख, पृ. 1
11. उदयन वाजपेयी, अस्मिता का खेल, राजेन्द्र यादव (सपा), हंस, जनवरी 1994, पृ. 23
12. सीमोन द बाउवार, द सेकण्ड सेक्स (अनु.प्रभा खेतान, स्त्री उपेक्षिता) सरस्वती बिहार, जी.टी.रोड शाहदरा, दिलशाद गार्डन, दिल्ली- 110095, प्रथम हिन्दी संस्करण, 1990 पृ. 61.
13. मृगल पाण्डे, स्त्री: देह की राजनीति से देश की राजनीति तक, सं. 2002, पृ0 129.
14. डॉ. अमर ज्योति, महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में नारीवादी दृष्टि पृ. सं. 33
15. डॉ. नीहार गीते, स्वातंत्र्योत्तर महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में यथार्थ के विभिन्न रूप, पृ. सं. 7

Corresponding Author

Savita*

Research Scholar, OPJS University, Churu, Rajasthan